अंचलगच्छ द्वारा मेवाड़ राज्यमें

जैनधर्म का उत्कर्ष

❑ श्री बलवन्तसिंह महेता

[श्रीमद् जैनाचार्य अजितसिंहसूरिके उपदेशसे सारे राज्यमें जीवहिंसा बंद][1]

राजस्थान जो भारतमें जैनधर्मके प्रमुख केन्द्रोंमें माना जाता है उसमें मेवाड़ का प्रमुख एवं विशिष्ट स्थान रहा है। अहिंसाधर्म वीरोंका धर्म है और 'कर्मै सूरा सो धर्म्मै सूरा' के अनुसार वीर लोग ही इसका पालन कर सकते हैं। जैनाचार्योंके उपदेशसे मेवाड़के जैन वीर और वीरांगनाओं ने इसको अपने जीवनमें उतार, शौर्य, साहस, त्याग और बलिदानके देश व धर्मके लिए जो अद्भुत उदाहरण उपस्थित कर मानवके गौरव व गरिमाको बढ़ाया, वे भारतके इतिहासमें ही नहीं संसारके इतिहासमें अनूठे माने जाकर अमिट रहेंगे और प्रत्येक देशके नर-नारियोंके लिए सदाके लिए प्रेरणास्रोत बने रहेंगे।

अहिंसाको कायरताका प्रतीक मानने वालोंको भी मेवाड़के इन्हीं जैनवीरोंने उन्हें अपने कर्तव्योंसे मुँह तोड़ उत्तर दे, जैनधर्मकी जो प्रतिष्ठा बढ़ाई है वह जैनसमाजके लिए कम गौरवकी बात नहीं मानी जायगी। राजस्थानके सब ही क्षत्रिय राजाओंको प्रजा द्वारा 'घणी खम्मां' से संबोधित किये जानेकी प्रथाका प्रचलित होना जैनाचार्योंके द्वारा 'क्षमा वीरस्य भूषणम्' के उपदेशका ही प्रतिफल माना गया है।

कर्मभूमि ही धर्मकी केंद्रभूमि हो सकती है। यही कारण है कि मालवा, गुजरात तथा राजस्थान के सब ही धर्माचार्यों ने मेवाड़ को अपने धर्मप्रचारके लिए केंद्रस्थल बनाया और आशातीत सफलता प्राप्त कर जैन धर्म को व्यापक बनाया। मेवाड़ को कर्मभूमि में परिवर्तित करनेमें प्रकृतिकी भी बड़ी देन रही है। यही कारण है कि तीर्थंकरोंसे लेकर जैनधर्म के सबही जैनाचार्यों ने इस भूमिको स्पर्श किया।

मेवाड़ बनास व चंबल नदियों और उसकी शाखाओं के कूलों व घाटियों में बसा हुआ है। जहाँ आन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त प्रसिद्ध पुरातत्त्ववेत्ता डॉ. सांकलियाने उत्खनन और शोध से एक लाख वर्ष पूर्वमें आदिम मानव का अस्तित्व प्रामाणित किया है। भारतमें पाषाणयुगकालीन सभ्यता के सर्वाधिक शस्त्रास्त्र भी यहीं पाये जाने से मेवाड़ स्वतः ही भारत की मानवसभ्यता के आदि उद्गम स्थानोंमें आता है और उसे कर्मभूमि में परिवर्तित करता है।

मेवाड़ में जैनधर्म उतना ही प्राचीन है जितना कि उसका इतिहास। मेवाड़ और जैनधर्मका मणिकांचन संयोग है। मेवाड़ आरंभसे ही जैनधर्मका प्रमुख केंद्र रहा है। 'मोहेन्जो डेरो' के समान प्राचीन नगर आधार 'आहड़' और महाभारतकालीन मज्झिमिका नगर और उसकी बौद्धकालीन दुर्ग जयतुर—चित्तौड़ मेवाड़ में

१. डॉ. पीटर्सन रिपोर्ट ३ और ५वीं, मेवाड़का इतिहास।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जैनधर्म के बड़े केंद्र रहे हैं। जिनके लिए 'आघाटे मेदपाटे क्षितितल-मुकुटे चित्रकूटे त्रिकूटे, कह कर स्तवनों में तीर्थस्थान रूपमें मेवाड़की और चित्तौड़की स्तुति की गई है।

इसी आयड नगर में सं. १२८५ में श्रीमद्जगच्चंद्रसूरि द्वारा तपागच्छ का प्रादुर्भाव हुआ। यहां के परमार और गहलोत राजाओं के समय कई जैनमन्दिर बने और कई ग्रन्थों की रचना हुई और श्रावकों ने कई ग्रंथ लिखवाये। जैनमन्दिरों को कई मंडपिकाओंसे कर दिलवाये। मज्झिमिया नगरी जो चित्तौड़ के पास है इसका नाम अर्धमागधी भाषा का है जिसका अर्थ ही पवित्र और सुंदर नगर होता है। कहते हैं कि गौतमस्वामी यहां अपने शिष्यों को लेकर आये थे और जब मथुरा में जैनधर्म की दूसरी संगिति हुई थी तब यहां के मज्झमिया संघने वहाँ प्रतिनिधित्व किया था। मज्झमिया संघ उस समय भारत के प्रसिद्ध जैनसंघोंमें स्थान रखता था। इसी नगरीका बौद्धकालीन जयतूरका दुर्ग पूर्व मध्यकाल में चित्ततौर—चित्तौड़ होकर जैनधर्म का तीर्थस्थल और जैनधर्मप्रचार का राजस्थान, गुजरात व मालवाका मुख्य केंद्र बन गया। जैन जगतके मार्तण्ड सिद्धसेन उज्जैन से भोज की सीमा को छोड़ साधना के लिए चित्तौड़ आये। साधनाके बाद ही वे जैनन्याय के अलौकिक ग्रंथ लिख सके और धर्म आदि पर अनेकों ग्रंथों की रचना कर दिवाकर बन गये।

भारत के महान तत्त्वविचारक, समन्वयके आदि पुरस्कर्ता, अद्वितीय साहित्यकार एवं शास्त्रकार हरिभद्रसूरिजी पहले वेदवेदांग के प्रकांड पंडित थे। जैनधर्म स्वीकार कर, जैनधर्म की उन्होंने जो देन दी है, जैन समाज सदा के लिए उनका ऋणी रहेगा। वे इसी चित्तौड़भूमि के नररत्न थे। आंतरराष्ट्रीय ख्यातिप्राप्त जैन साध्वी याकिनी महत्तराजी हरिभद्र की धर्मगुरु थीं वे इसी चित्तौड़ की निवासिनी थीं। प्रसिद्ध जैनाचार्य उद्योतनसूरि, सिद्धर्षि, जिनदत्तसूरि आदि की भी यह चित्तौड़ नगरी वर्षों तक धर्म प्रसार की भूमि ही नहीं किंतु उनकी विकास भूमि भी रही है और दीक्षितभूमि भी। हजारों स्त्रीपुरुषों को इन आचार्यों के द्वारा यहाँ जैनधर्म में दीक्षित किया था।

जैनधर्ममें चैत्यवासियोंमें शिथिलाचार बढ़ कर अनाचार फैलने लगा तो गुजरातसे जिनवल्लभसूरिने सं. ११४९ के आसपास चित्तौड़ पर आकर शिथिलाचार के विरुद्ध आंदोलन छेड़ दिया और शुद्ध स्वरूपमें विधिगच्छ की स्थापना में अपने आप को लगा दिया। इसमें उन्हें अनेक प्रकार की यातनाएं सहन करनी पड़ी और संगठित प्रबल विरोध का सामना करना पड़ा। पर वे अपने निश्चय से नहीं डिगे और प्रचारकार्य में लगे रहे।

श्रीजिनवल्लभसूरि को आचार्यपद भी चित्तौड़ में दिया गया और उसी साल याने सं. ११६७ में उनका परलोकगमन हो गया।

जिस शिथिलाचार और चैत्यवासियोंके अनाचारको मिटानेका बीड़ा खरतरगच्छने उठाया था उसे फिर अंचलगच्छ और तपागच्छ ने भागीदारी कर उसको सदैव के लिए समाप्त कर दिया। इसके साथ अंचलगच्छने लोगों को मद्यमांस के सेवन से छुड़ा लाखों मनुष्यों को जैनधर्म में दीक्षित किया।

राजस्थानके राजाओं पर अंचलगच्छ का बड़ा प्रभाव रहा। राजस्थान में प्रतिहार, सोलंकी, चौहाण, राठोड़ और गहलोत वंश के ही अधिकतर राज्य रहे और राजस्थानमें इनका सबसे अधिक वर्चस्व रहा।

अंचलगच्छ के (विधिपक्षगच्छ के) प्रवर्तक आद्य आचार्यप्रवर श्री आर्यरक्षितसूरिने सं. ११६९ से सं.

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१२३६ के बीचमें एवं उनके पट्टधर महाप्रभावक श्री जयसिंहसूरिने राजस्थान में एवं मेवाड़ प्रान्त में विहार किया था। और उनके उपदेश के कारण अनेक जिनमंदिर-निर्माण और अनेक बिंबप्रतिष्ठा संपन्न हुई थीं।

सं. १२५५ में अंचलगच्छनायक श्री जयसिंहसूरिने जेसलमेर के राजपूत श्री देवड़ चावड़ा को प्रतिबोध देकर जैनमतानुयायी बनाया एवं ओसवालज्ञातिमें सम्मिलित करवाया। देवड़ के पुत्र झामर ने जालोर में एक लाख सत्तर हजार टंकका व्यय करके आदिनाथ प्रभु के शिखरयुक्त मंदिर का निर्माण करवाया। झामर का पुत्र देढिया हुआ। वह बहुत प्रतापी था। इसके नाम से 'देढिया' गोत्रनाम उत्पन्न हुआ जो आज तक विद्यमान है।

सं. १२५६ में चित्तौड़ के चावड़ा राउत वीरदत्त ने अंचलगच्छ के जयसिंहसूरिके सदुपदेश से जैनधर्म स्वीकार किया। वीरदत्त के वंशज 'निसर' गोत्र प्रसिद्ध हुए।

मारवाड़ के कोटडा गाँव के केशव राठोड़ ने सं. १२५९ में जयसिंहसूरिके उपदेश से जैनधर्म स्वीकार किया था।

सं. १२४९ में भिन्नमाल के निकटस्थ रत्नपुर के सहस्त्रगणा गांधी ने जयसिंहसूरिके उपदेश से शत्रुंजय तीर्थ पर अद्भुतजी दादा की विशाल प्रतिभा प्रतिष्ठित करवाई।

सं. १२६५ में जयसिंहसूरिके पट्टधर गच्छनायक धर्मघोषसूरि के सदुपदेश से चौहाणवंशज भीम ने जैनधर्म का स्वीकार किया। तब से ओसवाल ज्ञाति में 'चौहाण' गोत्र स्थापित हुआ। जालोर, चित्तौड़ आदि प्रांत में धर्मघोषसूरि एवं जयप्रभसूरि के सदुपदेश से जिनमंदिर निर्माण एवं अहिंसा के प्रचार का कार्य हुआ। कणय-गिरि के देदाशाह धर्मघोषसूरि के उपदेश से जैन बने। देदाशाह की बहिनने किसी उत्सव में विषमिश्रित भोजन बनाया। धर्मघोषसूरि को ध्यानबल से यह यह वंचना ज्ञात हो गई। इस ज्ञानशक्ति के प्रभाव से बत्तीस साधु एवं सारा संघ मृत्यु से बच गया। अंचलगच्छाधिति आ. अजितसिंह एवं रावल समरसिंह का समागम इतिहास-प्रसिद्ध है। मेवाड़ में जैनधर्मावलंबियों ने एवं जैनाचार्यों ने, मुनिवरों ने काफी विहार किया था। अंचलगच्छका साधुसमुदाय जो यहाँ बिहरण करता था, उनमें भी मेवाड़ के नाम से मेदपाटी नाम की शाखा अंचलगच्छ में उत्पन्न हुई थी।

मेदपाटी शाखा के अंचलगच्छीय उदयराजगणि आदि का पादुकामंदिर आज भी नाडोलके बड़े जिनमंदिर में विद्यमान है।

चौहानों में शाकंभरी, जालौर और नाडोल के राजा बड़े पराक्रमी और साम्राज्यवादी रहे। अंचलगच्छ के आचार्यों एवं साधुओं का इन पर बड़ा प्रभाव पड़ा। वैसे राजस्थान के प्रायः सब ही राजा जैनधर्म का आदर करते थे और पर्यूषण पर्व के दिनों अमारी की घोषणा भी करवाते थे पर इन चौहान राजाओं ने तो जैनधर्म को पूर्णरूप से आत्मसात् कर लिया। इन चौहान राजाओं ने जहाँ जहाँ अपनी लड़कियां दीं वहाँ भी उन्होंने जैनमंदिर बनवाये और जैन उपाश्रयों को भूमि दिलवाई और समय समय पर अमारी की घोषणा करवाई।

जालोर और नाडोल के राजा चाचिकदेव ने अपनी लड़की जयतल्लदेवी को जब चित्तौड़ के प्रतापी राजा जैत्रसिंह के पुत्र तेजसिंह को ब्याही तब चाचिकदेवने अपनी लड़की के दहेज में करेड़ा पार्श्वनाथ के मंदिर की सेवा पूजा के लिये नाडोल आदि कई मंडपिकाओं से कर आदि की लाग लगा दी।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस लड़की ने चित्तौड़ में जाते ही श्याम पार्श्वनाथ का मंदिर बनाया और अपने पति महारावल तेजसिंह को जैनधर्म की ओर इतना आकृष्ट कर दिया कि उसने भट्टारक की पदवी धारण कर ली और कई जैन उपाश्रयों को भूमि आदि दिलवाई। इसी राणी के प्रभाव के कारण तेजसिंह के पुत्र रावल समरसिंह ने अंचलगच्छ के प्रभावक जैनाचार्य गच्छनायक श्री अजितसिंहसूरि के उपदेश से अपने सारे मेवाड़ राज्य में जीवहिंसा बंद करवा दी।

गुजरात के जैन राजा कुमारपाल से उसके प्रसिद्ध गुरु हेमचंद्राचार्य भी जो कार्य नहीं करवा सके वह कार्य अजितसिंहसूरि ने मेवाड़ के राजा से करवा दिया।

महाराज अशोक के बाद यह दूसरी घटना है कि एक राज्य में पूर्णरूप से एक राजा ने जीवहिंसा बंद करवा दी। भारत के धार्मिक इतिहास में ऐसी घटना अन्यत्र कहीं नहीं मिलेगी। जैनाचार्य अंचलगच्छनायक अजितसिंह सूरि ने जैनधर्म के कीर्तिमन्दिर पर सारे राज्य में जीवहिंसा बंद कराकर कलश चढ़ा दिया।

यह घटना सं. १३३० से १३३८ के बीच की है जबकि समरसिंह मेवाड़ का राजा राज कर रह था।

❀ ❀ ❀

उत्तमखममद्दवज्जव—सच्चसउच्चं च संजमं चेव।
तव चागमकिंचाण्हं, बम्ह इदि दसविहो धम्मो॥

उत्तम क्षमा, उत्तम मार्दव, उत्तम आर्जव, उत्तम सत्य, उत्तम शौच, उत्तम संयम, उत्तम तप, उत्तम त्याग, उत्तम आकिंचन्य तथा उत्तम ब्रह्मचर्य। ये दस प्रकार के धर्म हैं।

जा जा वज्जई रयणी, न सा पडिनियत्तई।
अहम्मं कुणमाणस्स, अफला जन्ति राइओ॥

जो-जो रात बीत जाती है, वह वापस लौटकर नहीं आती। अधर्म करनेवाले की रात निष्फल जाती है।

अप्पा कत्ता विकत्ता य, दुहाण य सुहाण य।
अप्पा मित्तममित्तं च, दुप्पट्ठिय सुप्पट्ठिओ॥

सुख-दुःख का कर्त्ता आत्मा ही है और भोक्ता (विकर्त्ता) भी आत्मा ही है, सत् प्रवृत्ति करनेवाली आत्मा ही स्वयंका मित्र है और दुष्प्रवृत्ति करनेवाली आत्मा ही स्वयंका शत्रु है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org